International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(4): 02-04

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(4): 02-04
© 2015 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 14-03-2015
Accepted: 10-04-2015

रामेश्वर
शोधच्छात्र (पीएच.डी.)
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

Correspondence
रामेश्वर
शोधच्छात्र (पीएच.डी.)
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

तिङर्थ–विचार

रामेश्वर

तिङन्त पदों में दो अंश महत्त्वपूर्ण होते हैं– धातु और प्रत्यय। आख्यातार्थ (तिङ्) विषय वैयाकरण–दर्शन का महत्त्वपूर्ण विषय है। इसके वैशिष्ट्य को देखते हुए वैयाकरण, मीमांसक, नैयायिक आदि विद्वानों ने गम्भीरता पूर्वक चिन्तन किया है। वैयाकरण तिङर्थ कर्त्ता कर्म संख्या, काल मानते हैं। वही मीमांसक तिङर्थ व्यापार (भावना) मानते हैं। नैयायिक कृति (प्रयत्न) विशेष को तिङर्थ मानते हैं।

वैयाकरण मत– वैयाकरण तिङर्थ को धात्वर्थ का आश्रय मानते हैं। यहाँ प्रश्न उत्पन्न होता है कि किसके आश्रय? प्रत्यासत्ति न्याय से फल और व्यापार के आश्रय।

कौण्डभट्ट का मत– आचार्य कौण्डभट्ट आश्रय में तिङ् की शक्ति स्वीकार करते हैं।[1] तात्पर्य यह है कि तिङ् में आश्रय कहे गये हैं। आचार्य नागेशभट्ट आश्रयत्व का अभिप्राय "अखण्ड उपाधिरूप शक्यतावच्छेदक" मानते हैं।[2]
फलाश्रय और व्यापाराश्रय में तिङ् की शक्ति होती है। फलाश्रय कर्म में रहता है।[3] व्यापाराश्रय कर्त्ता में रहता है[4] मीमांसक वैयाकरण मत में शंका करते हुए कहते हैं कि आप तिङ् प्रत्ययों का अर्थ, कर्त्ता, कर्म मानते हो, इसमें क्या प्रमाण है। तब वैयाकरण मीमांसकों की शङ्का का समाधान करते हुए कहते हैं कि पचति, पठति, हसति आदि के द्वारा कर्त्ता और पच्यते, पठ्यते हस्यते आदि के द्वारा कर्म को मानना चाहिए। आचार्य पाणिनि का **"लः कर्मणि चभावे चाऽकर्मकेभ्यः"** [5] सूत्र प्रत्यक्ष प्रमाण है, जिसमें बताया गया है कि सकर्मक धातुओं में लकार कर्त्ता कर्म अर्थ में, और अकर्मक धातुओं में लकार कर्त्ता, भाव अर्थ में होते हैं। यहाँ पर लकार में जो अर्थ कहे गये है, वो वास्तविक में तिङों के अर्थ हैं, क्योंकि लकारों के स्थान पर तिङ् आदेश होते हैं। जैसे– 'रामान्' में नकारादियों के द्वारा कर्म की प्रतीति होती है, परन्तु व्याकरण प्रक्रिया में उसे 'शस्' विभक्तियों के द्वारा कल्पित किया जाता है। आचार्य कौण्डभट्ट तिङ् के चार अर्थ, कर्त्ता, कर्म, संख्या, काल स्वीकार करते हैं।[6]

आचार्य पाणिनि– आचार्य पाणिनि तिङ् के तीन अर्थ कर्ता, कर्म, भाव मानते हैं।[7] जैसे–
कर्त्ता अर्थ में = देवदत्तः पचति।
कर्म अर्थ में = देवदत्तेन तण्डुलाः पच्यते।
भाव अर्थ में = देवदत्तः हस्यते।

नागेशभट्ट– आचार्य नागेशभट्ट तिङ् की परिभाषा देते हुए कहते हैं–
तत्र सङ्ख्याविशेषः कालविशेषः कारकविशेषः भावा लादेशमात्रस्य अर्थाः[8]

अर्थात् सभी लकार सङ्ख्याविशेष, कालविशेष और कर्त्ता, कर्म में से किसी एक कारक को और कहीं–कहीं केवल भाव अर्थ को कहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि नागेशभट्ट तिङ् के मुख्यतः तीन अर्थ कर्त्ता, संख्या, काल अर्थ मानते हैं। यहाँ पर कर्त्ता में ही कर्म और भाव का समावेश समझना चाहिए।

मीमांसक मत– मीमांसक मत में तिङ् का अर्थ भावना है[9] और कर्त्ता कर्म की प्रतीति लक्षणा से होती है। मीमांसकों में आचार्य मण्डनमिश्र तिङ् का अर्थ व्यापार (भावना) को मानते हैं। नागेशभट्ट मण्डनमिश्र के मत को उद्घृत करते हुए कहते हैं– **फलं धात्वर्थो व्यापारः प्रत्ययार्थः।**[10]
आचार्य गंगेश मण्डनमिश्र के मत को उद्घृत करते हुए कहते हैं कि आग जलाना, फूक मारना, बर्तन नीचे उतारना आदि को तिङ् का अर्थ माना जाता है।[11] ऐसा न करने पर गौरव दोषोत्पत्ति हो जाएगी।

भावना– मीमांसक तिङ् का अर्थ भावना मानते हैं। भावना क्या है, इसकी परिभाषा लोगाक्षिभास्कर अर्थसंग्रह में देते हुए कहते हैं कि अव्युत्पन्न होने वाले का भवनानुकूलो उत्पत्तिजनक, जो प्रयोजक का व्यापार विशेष ही भावना है।[12]
मीमांसक तिङर्थ विषय में अपने मत की पुष्टि करते हुए तीन तर्क देते हैं–

1. लक्षणा के द्वारा– 'गङ्गायां घोषः' में गङ्गा शब्द का अर्थ 'जल प्रवाह' है इसका अर्थ होगा "गङ्गा में गाँव" परन्तु जल प्रवाह में गाँव कैसे हो सकता है। तब लक्षणा के द्वारा 'गङ्गा' शब्द से तट अर्थ लिया जाएगा। इसी प्रकार तिङ् प्रत्ययों का अर्थ तो भावना है, परन्तु लक्षणा से कर्त्ता कर्म अर्थ का अध्याहार करने में कोई आपत्ति नहीं है।

2. अर्थापत्ति द्वारा– जिसके बिना कोई कार्य सिद्ध नहीं होता, तब कल्पना करके वह कार्य सिद्ध हो सकता है। जैसे– **पीनोऽयं देवदत्तः दिवा न भुङ्क्ते** अर्थात् देवदत्त दिन में नहीं खाता है, फिर भी मोटा है। तो इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है, कि बिना खाए पीनत्व उत्पन्न नहीं हो सकता है। इससे यह कल्पना कर सकते हैं, कि देवदत्त दिन में नहीं खाता होगा तो रात्रि में अवश्य खाता होगा। इसी प्रकार तिङ् प्रत्ययों का अर्थ भावना बिना कर्त्ता कर्म के कैसे हो सकते है। इसीलिए यहाँ पर कर्त्ता कर्म की कल्पना कर लेनी चाहिए।

3. प्रथमान्त पद– 'देवदत्तः पचति' में पचति क्रिया के साथ प्रथमान्त पद देवदत्तः लगा है, इससे भी कर्त्ता आदि की प्रतीति की कल्पना कर लेगें क्योंकि साथ में लगे पद का वाक्यार्थ में उपयोग किया जा सकता है।

वैयाकरणों द्वारा मीमांसक मत का खण्डन– वैयाकरण मीमांसकों के तिङर्थ मत से सन्तुष्ट नहीं है। वे कहते हैं कि यदि मीमांसक तिङ् का अर्थ भावना मानते हैं तो पाणिनि का **"लः कर्मणि चभावे चाऽकर्मकेभ्यः"** [13] सूत्र निरर्थक हो जायेगा क्योंकि इस सूत्र में चकारद्वय से **'कर्तरि कृत्'**[14] इस सूत्र से दो बार कर्त्तरि की अनुवृत्ति आ रही है। इस सूत्र का अर्थ है कि कृत् प्रत्यय कर्त्ता, कर्म अर्थ में होते हैं। इस बात को मीमांसक भी स्वीकार करते हैं। वैयाकरण मीमांसकों से कहते हैं कि एक तरफ तो आप कृत् प्रत्ययों में कर्त्ता, कर्म की शक्ति मानते हो और वहाँ पर भावना का ग्रहण लक्षणा के द्वारा ग्रहण करते हो, परन्तु तिङ् प्रत्यय में भावना (व्यापार) का ग्रहण करते हो और कर्त्ता कर्म का ग्रहण लक्षणा से करते हो। यह विरोधाभास कैसा? इसलिए तिङ् प्रत्ययों का अर्थ भावना न मानकर कर्त्ता, कर्म स्वीकार करो। यदि आप ऐसा नहीं मानते हो, तो कृत् प्रत्यय भावना अर्थ में होने लगेंगे, जो आपके मत में भी अनिष्ट है।

नैयायिकों का मत– नैयायिक तिङ् प्रत्यय का अर्थ कृति (यत्न) विशेष मानते हैं। प्राचीन नैयायिक सकर्मक धातुओं में द्वितीया विभक्ति का अर्थ फल स्वीकार करते हैं। यदि वाक्य में द्वितीय विभक्ति का प्रयोग नहीं होगा वहाँ तिङ् प्रत्यय का अर्थ फल हो जाएगा।[15] सारमंजरीकार आचार्य जयकृष्ण तिङ् प्रत्ययों की शक्ति कृति में मानते हैं।[16] नैयायिक अपने मत की पुष्टि के लिए तीन तर्क देते हैं।

प्रथम– नैयायिक कहते हैं कि यदि तिङ् प्रत्ययों का अर्थ कर्त्ता मानना ठीक नहीं है क्योंकि कर्त्ता में कृति होती है। अनेक कर्त्ता होने से कृति भी भिन्न–भिन्न होगी, जिससे अनावश्यक दोषोत्पत्ति होगी।

द्वितीय– यदि तिङ् प्रत्यय का अर्थ कर्त्ता मानते हैं, तो कृतिमान् को वाच्यार्थ मानना पड़ेगा। कृति की अपेक्षा कृतिमान् को गुरु मानने पर कर्त्ता को वाच्यार्थ मानने में गौरव दोष की उत्पत्ति होगी।

तृतीय– यदि प्रथमान्त पद से ही कर्त्ता की प्रतीति हो जाती है, तो लकार का कर्त्ता अर्थ मानने की क्या आवश्यकता है।

वैयाकरणों द्वारा नैयायिक मत का खण्डन– वैयाकरण नैयायिक मत से सन्तुष्ट नहीं हैं। वे नैयायिक मत का खण्डन करते हुए तिङ् का अर्थ कृति मानने पर प्रथम समस्या बताते हुए कहते हैं कि यदि आप तिङ् प्रत्यय का अर्थ कृति मानते हो और कर्त्ता कर्म नहीं मानते हो, तो अस्मद् युष्मद् शब्दों के साथ समानाधिकरणता नहीं बनेगी[17], क्योंकि अस्मद् और युष्मद् शब्द सर्वनाम है, इनमें प्रथम, मध्यम, उत्तम पुरुष का प्रयोग होगा। दूसरी समस्या यह है कि लट् के स्थान पर शतृ शानच् प्रत्यय होता है।[18] यदि तिङ् का अर्थ कृति मान लिया जाए, तो शतृ शानच् प्रत्यय कर्म, सम्प्रदान आदि कारकों का बोध नहीं करा पाएंगे, केवल कृति का ही बोध कराएंगे, तीसरी समस्या यह है कि लकारों का वाच्य सदा कृति रहेगा, कारक नहीं रहेगा, तो आचार्य पाणिनि की उक्त अनुक्त की व्यवस्था उच्छिन्न हो जाएगी,[19] क्योंकि आचार्य पाणिनि अनभिहित कर्म में द्वितीया[20] विभक्ति और कर्त्ता एवं करण में तृतीया[21] विभक्ति का विधान करते हैं।
यदि आप तिङ् के अर्थ कर्त्ता कर्म मानते हैं, तो कोई समस्या नहीं है, इसीलिए तिङ् का अर्थ कृति न मानकर कर्त्ता कर्म स्वीकार करो।

निष्कर्ष– प्रस्तुत शोध पत्र 'तिङर्थ विचार' पर किए गये चिन्तन द्वारा यह निष्कर्ष निकलता है कि तिङर्थ को लेकर वैयाकरण, मीमांसक नैयायिकों में मतभेद है। इस विषय में वैयाकरणों में आपसी मतभेद हैं। कौण्डभट्ट तिङ् के चार अर्थ कर्त्ता, कर्म, संख्या काल मानते हैं, वही पाणिनि तिङ् के तीन अर्थ कर्त्ता, कर्म, भाव मानते हैं। नागेशभट्ट कौण्डभट्ट के मत से सहमत नहीं है, वे तिङ् के तीन अर्थ कर्त्ता, संख्या काल मानते हैं।
मीमांसकों का मत वैयाकरणों से भिन्न है। वे तिङ् का अर्थ भावना (व्यापार) मानते हैं। यही विचार मण्डनमिश्र और उनके अनुयायियों का है। नैयायिकों का मत वैयाकरणों, मीमांसकों से बिल्कुल अलग है। नैयायिक तिङ् का अर्थ कृति (प्रयत्न) विशेष मानते हैं। इस शोध पत्र का निष्कर्ष यही है कि तिङ् विषय में वैयाकरणों का मत अधिक उपयोगी है।

सन्दर्भ –

1. वै.भू.सार.– कारिका–2,
   फलव्यापारयोर्धातुराश्रये तु तिङ स्मृताः।
   फले प्रधानं व्यापारस्तिङर्थस्तु विशेषणम्।।
2. पलम – "आश्रयत्वं चाखण्डोपाधिरूपं शक्यतावच्छेदकम्।"
3. वै.भू.सार. – "फलाश्रयः कर्म"
4. वै.भू.सार. – "व्यापाराश्रय कर्त्ता"
5. पाणिनि अष्टाध्यायी (3.4.69)
6. वै.भू.सार (पृष्ठ 18) – "तिङर्थाः कर्तृकर्मसंख्याकालाः।"
7. पा. (3.4.64) – "लः कर्मणि च भावे चाऽकर्मकेभ्यः।"
8. पालम. (पृष्ठ 244)
9. वै.भू.सार – "व्यापारो भावना सैवोत्पादना सैव च क्रिया। (कारिका–5)
10. पलम. (पृष्ठ 133–34) – धात्वर्थ निर्णय
11. तत्त्वचिन्तामणि– शब्दखण्ड, पृष्ठ 847
12. अर्थसंग्रह – "भावना नाम भवितुर्भवनानुकूलो भावयितुर्व्यापारविशेषः।।"
13. पा. 3.4.69
14. पा. 3.4.67
15. धात्वर्थ विचार, मंजू जैन, (पृष्ठ 35)–
    "अतो व्यापारमात्रं धात्वर्थ फलंच द्वितीयार्थः इत्यन्ये।"
16. संस्कृत व्याकरण दर्शन की दार्शनिक भूमिका– मंगलराम, पृष्ठ 25
17. लम. (पृष्ठ 737) – किं च "युष्मद्युपपदे" इति सूत्रोक्तस्य ऋष्यनुभवसिद्धसमाना– धिकरण्यस्य त्वन्मतेऽनुपपत्ति

18. पा. (3.2.124) – "लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे"
19. पलम (पृष्ठ 170) – "अभिहितत्वानभिहितत्त्वव्यवस्थोच्छेदापत्तिश्च"
20. पा. (2.3.2) – कर्मणि, द्वितीया
21. पा. (2.3.18) – कर्तृकरणोस्तृतीया